श्री परमानंद स्तोत्र

(पद्यानुवाद - आचार्य श्री विमर्शसागर)

परमानंद महास्तोत्र, मोक्ष दिखाये रे - ऽऽ
शुद्धात्मा की, हो-हो-2 अनुभूति कराये रे - ऽऽ
परमानंद महास्तोत्र....

जो परमानंद युक्त कहा, जो विकार से रहित अहा।
आधि-व्याधि सब रोगों से, रहित निरामय अतः सदा।।
निज तन स्थित शोभित है, परमातम मन मोहित है।
ध्यानहीन न देख सके, अतः नहीं सम्मोहित है।।
ज्ञानी निजप्रभु का, हो-हो-2 अनुभव कर पाये रे ।।1।।

जो अनन्तसुख से परिपूर्ण, जो अनन्तबल से परिपूर्ण।
जो सागरसम ज्ञानमयी, अमृतजल से है सम्पूर्ण।।
ऐसा ही परमात्म स्वरूप, ऐसा ही निज आत्मस्वरूप।
अवलोकन जो करता है, बन जाता है अमल अनूप।।
योगी ही निज का, हो-हो-2 अनुभव कर पाये रे।।2।।

जो रागादि विकार रहित, निराबाध निज गुण शोभित।
अन्तरंग-बहिरंग सभी, परिग्रह से भी जो विरहित।।
केवलज्ञान स्वरूप कहा, केवलदर्शन रूप कहा।
परमानन्दमयी चेतन, केवल अनुभव रूप कहा।।
परमात्मा का, हो-हो-2 लक्षण कहलाये रे ।।3।।

उत्तम है स्वातम चिन्ता, मध्यम कही मोह चिन्ता।
होती अधम कामचिन्ता, अधमाधम है परचिंता।।

जो तीनों चिंता तजकर, एक स्वात्मा ही भजकर।
भेदज्ञान प्रगटाता है, करता है पुरुषार्थ प्रखर।।
निश्चय समाधि, हो-हो-2 वो ही धर पाये रे।।4।।

निर्विकल्पता से उत्पन्न, आत्मज्ञान से हो सम्पन्न।।
ज्ञानामृत रस झरता है, सर्वप्रदेशों से निष्पन्न।।
विवेकांजुलि पाकर के, भेदज्ञान प्रगटाकर के।
ज्ञानामृत रस पीते हैं, योगीजन समता धरके।।
निज रस बिन इनको, हो-हो-2 कुछ और न भाये रे ।।5।।

नित्यानन्दस्वरूप अहा, आतम अरस-अरूप कहा।
भव्य पुरुष जो जान रहा, सच्चा पण्डित वही कहा।।
वह योगीपद को धरता, शुद्ध आत्मा को वरता।
जो परमानन्द का कारण, जिन शुद्धातम अनुभवता।।
मुक्तानुभूति, हो-हो-2 निज-मुक्ति कहाये रे।।6।।

जैसे सुन्दर नलिनीदल, ऊपर स्थित बिन्दु जल।
भिन्न-भिन्न रहते दोनों, नलिनीदल वा बिन्दु जल।।
वैसे ही तन में रहता, निर्मल आतम स्वभावता।
स्वाभाविक निजभावों से, तन से भिन्न रहा करता।।
चेतन-तन यारी, हो-हो-2 न्यारी कहलाये रे।।7।।

ज्ञानावरणादिक जानो, द्रव्यकर्म मल है मानो।
भावकर्म रागादिक जो, कारण-कार्य इन्हैं जानो।।
देहादिक नोकर्म कहा, चेतन सबसे रहित अहा।
निश्चय से ऐसा जानो, सर्वज्ञों ने यही कहा।।
सर्वज्ञ बिन क्या, हो-हो-2 निर्णय हो पाये रे।।8।।

जिस प्रकार जन्मान्ध अरे, सूर्य दर्श की चाह करे।
किन्तु दर्श न पाता है, चाहे जितना यत्न करे।।
वैसे निज तन में राजित, नित्यानन्द स्वरूप सहित।
परम ब्रह्म परमातम जो, ध्यान चक्षु से है दर्शित।।
ध्यानान्ध कैसे, हो-हो-2 दर्शन कर पाये रे।।9।।

सम्यक् ध्यान वही होता, मन चंचलता को खोता।
लीन हुआ परमानन्द में, खूब लगाता है गोता।।
भव्यजीव वह ध्यान करें, तत्क्षण ही अज्ञान हरें।
चमत्कार चित् दर्शन कर, शुद्धातम का ज्ञान करें।।
ध्यानी निज प्रभु का, हो-हो-2 दर्शन कर पाये रे।।10।।

शुद्धातम नित ध्याते जो, श्रेष्ठ मुनि कहलाते जो।
भव-भवसेआगतदुःखको, निश्चयशीघ्रनशातेवो।।
परमातम पद को पाते, पूर्णज्ञान में रम जाते।
अहो! मात्र क्षणभर में ही, महा मोक्षपद अपनाते।।
शुद्धात्म ध्यानी, हो-हो-2 सिद्धालय पाये रे।।11।।

जो निज ध्यान प्रवीण हुए, जो स्वातमरस भीन हुए।
तज संकल्प-विकल्प सभी, निज स्वभाव में लीन हुए।।
वे मुनि नित्यानन्द स्वरूप, परमातम जो अमल अनूप।
करते अचल निवास सदा, जो योगी जाने इस रूप।।
स्वयमेव वह भी, हो-हो-2 परमातम पाये रे।।12।।

अहा! वही परमात्मस्वरूप, चिदानन्दमय अविकल रूप।
रागादिक मल हीन अतः, कहलाता है शुद्ध स्वरूप।।

निराकार नीरोग अहा, सुख अनंत परियोग कहा।
अन्तरंग-बहिरंग सभी, परिग्रहों से शून्य कहा।।
योगी ही निज में, हो-हो-2 रमकर सुख पाये रे।।13।।

निश्चय नय से आतम जान, लोकाकाश प्रदेश प्रमाण।
वह व्यवहार अपेक्षा से, छोटे-बड़े शरीर प्रमाण।।
इसमें न कोई संशय, इसमें न कोई विस्मय।
परमेश्वर ने यही कहा, मान रहा ज्ञानी निर्भय।।
आतम का निर्णय, हो-हो-2 ज्ञानी कर पाये रे।।14।।

निर्विकल्प समता धरके, चित्त पूर्ण स्थिर करके।
अहा! शुद्ध परमात्मस्वरूप, निज में स्थित होकर के।।
जो योगी जिस क्षण लखता, विभ्रम उस क्षण ही मिटता।
रहता न अज्ञान जरा, पूर्ण स्वभाव सहज रहता।।
स्थिर चित् योगी, हो-हो-2 अज्ञान नशाये रे।।15।।

वही परमध्यानी योगी, परम ब्रह्म निश्चय भोगी।
कर्म विजेता जिनपुंगव, कहलाता वह ही योगी।।
किया परम पुरुषार्थ अतः, परम तत्त्व है निश्चयतः।
गुरु भी जिसको ध्याते हैं, परमगुरु है वही अतः।।
यह परमातम का, हो-हो-2 निज-रूप कहाये रे।।16।।

लोकालोक प्रकाशी है, परमज्योति अविनाशी है।
कर्म निर्जरा का हेतु, अतः परम तप वासी है।।
शुक्लध्यान का ध्याता है, परम ध्यान कहलाता है।
निजस्वरूपमय होने से, वह परमात्म कहाता है।।
परमात्म अनुभव, हो-हो-2 निर्जरा कहाये रे।।

सर्वजीव कल्याण सदा, अतः सर्व कल्याण कहा।
नित्य अतीन्द्रिय सुखमय है, अतः परम सुख पात्र कहा।।
ज्ञान चेतना रूप अतः वही शुद्धचिद्रूप कहा।
स्वपर मोक्षमय होने से, वही परम शिवरूप कहा।।
नाना गुण से ही, हो-हो-2 सब संज्ञा पाये रे।।18।।

पूर्ण निजाश्रित नित्य अहा, वह परमानंद युक्त कहा।
स्वयं सर्वसुखदायक है, अतः दुःखों से मुक्त कहा।।
कर्म-कर्मफल चेतन हीन, अतः परम चैतन्य प्रवीण।
वह अनन्त गुण का सागर, हो सकता कैसे गुणहीन।।
स्वाभाविक परिणति, हो-हो-2 इस रूप बनाये रे।।19।।

परम सौख्य सम्पन्न अहा, रागद्वेष से शून्य कहा।
ऐसा अर्हत् देव अहो! देह निकेतन में रहता।।
इस प्रकार जो जान रहा, ज्ञानी जो भी मान रहा।
वो ही सच्चा पंडित है, रहता न अज्ञान जरा।।
ज्ञायक की महिमा, हो-हो-2 ज्ञानी को आये रे।।20।।
संस्थान से रहित सदा, निराकार जो शुद्ध कहा।
निजस्वरूप में लीन अतः, निर्विकार अविरुद्ध अहा।।
कर्म कालिमा विघटाता, अतः निरंजन कहलाता।
आठ गुणों से अति शोभित, सिद्ध प्रभु को जो ध्याता।।
सिद्धों जैसा ही, हो-हो-2 इक दिन बन जाये रे।।21।।

मैं हूँ सहजानन्द स्वरूप, मैं हूँ नित चैतन्य स्वरूप।
जो निज आतम को जाने, इन गुणधारी सिद्ध स्वरूप।।
केवलज्ञान प्रकाश मिले, यही भावना नित्य फले।
सच्चा पंडित वही पुरुष, जिसके अन्तर दीप जले।।
सिद्धों को ध्याकर, हो-हो-2 निर्मल हो जाये रे।।22।।

जैसे कोइ स्वर्ण पाषाण, उसमें सोना कहे जहान।
दूध मध्य घृत होता है, कहता जैसे हर इंसान।।
जैसे तिल होता सुन्दर, तेल रहे उसके अन्दर।
वैसे ही आनन्द स्वरूप, आतम है तन के अन्दर।।
जो ऐसा माने, हो-हो-2 वह भव्य कहाये रे।।23।।

जैसे काष्ठ कोई सुन्दर, आग शक्तितः है अन्दर।
वैसे ही इस तन में भी, रहता शुद्धातम अन्दर।।
जो ज्ञानी माने ऐसा, जो ज्ञानी जाने ऐसा।
वो ही सच्चा पंडित है, बन जाता प्रभु के जैसा।।
परमात्मा को, हो-हो-2 निज में ही पाये रे।।24।।